~~~~~~

॥ ओ३म्॥

अथ सत्यार्थप्रकाशः

ओ३म् शन्नो॑ मि॒त्रः शं वरु॑णः शन्नो॑ भवत्वर्य्य॒मा ।
शन्न॒ऽइन्द्रो॒ बृहस्प॒तिः शन्नो॒ विष्णु॑रुरुक्र॒मः ॥

नमो॒ ब्रह्म॑णे नम॑स्ते वायो॒ त्वमे॒व प्र॒त्यक्षं॒ ब्रह्मा॑सि । त्वामे॒व प्र॒त्यक्षं॒ ब्रह्म॑ वदिष्यामि ऋ॒तं व॑दिष्यामि स॒त्यं व॑दिष्यामि तन्माम॑वतु तद्व॒क्तार॑मवतु। अव॑तु माम् अव॑तु व॒क्तार॑म् । ओ३म् शा॒न्तिश्शा॒न्तिश्शान्तिः ॥१॥

अर्थ–(ओ३म्) यह ओंकार शब्द परमेश्वर का सर्वोत्तम नाम है, क्योंकि इसमें जो अ, उ और म् तीन अक्षर मिलकर एक (ओ३म्) समुदाय हुआ है, इस एक नाम से परमेश्वर के बहुत नाम आते हैं जैसे–अकार से विराट्, अग्नि और विश्वादि। उकार से हिरण्यगर्भ, वायु और तैजसादि। मकार से ईश्वर, आदित्य और प्राज्ञादि नामों का वाचक और ग्राहक है। उसका ऐसा ही वेदादि सत्यशास्त्रों में स्पष्ट व्याख्यान किया है कि प्रकरणानुकूल ये सब नाम परमेश्वर ही के हैं।

(प्रश्न) परमेश्वर से भिन्न अर्थों के वाचक विराट् आदि नाम क्यों नहीं? ब्रह्माण्ड, पृथिवी आदि भूत, इन्द्रादि देवता और वैद्यकशास्त्र में शुण्ठ्यादि ओषधियों के भी ये नाम हैं, वा नहीं ?

(उत्तर) हैं, परन्तु परमात्मा के भी हैं।

(प्रश्न) केवल देवों का ग्रहण इन नामों से करते हो वा नहीं?

(उत्तर) आपके ग्रहण करने में क्या प्रमाण है?

(प्रश्न) देव सब प्रसिद्ध और वे उत्तम भी हैं, इससे मैं उनका ग्रहण करता हूँ।

(उत्तर) क्या परमेश्वर अप्रसिद्ध और उससे कोई उत्तम भी है? पुनः ये नाम परमेश्वर के भी क्यों नहीं मानते? जब परमेश्वर अप्रसिद्ध और उसके तुल्य भी कोई नहीं तो उससे उत्तम कोई क्योंकर हो सकेगा। इससे आपका यह कहना सत्य नहीं। क्योंकि आपके इस कहने में बहुत से दोष भी आते हैं, जैसे–**'उपस्थितं परित्यज्याऽनुपस्थितं याचत इति बाधितन्यायः'** किसी ने किसी के लिए भोजन का पदार्थ रख के कहा कि आप भोजन कीजिए और वह जो उसको छोड़ के अप्राप्त भोजन के लिए जहाँ–तहाँ भ्रमण करे उसको बुद्धिमान् न जानना चाहिए, क्योंकि वह उपस्थित नाम समीप प्राप्त हुए पदार्थ को छोड़ के अनुपस्थित अर्थात् अप्राप्त पदार्थ की प्राप्ति के लिए श्रम करता है। इसलिए जैसा वह पुरुष बुद्धिमान् नहीं वैसा ही आपका कथन हुआ। क्योंकि आप उन विराट् आदि नामों के जो प्रसिद्ध प्रमाणसिद्ध परमेश्वर और ब्रह्माण्डादि उपस्थित अर्थों का परित्याग करके असम्भव और अनुपस्थित देवादि के ग्रहण में श्रम करते हैं, इसमें कोई भी प्रमाण वा युक्ति नहीं। जो आप ऐसा कहें कि जहाँ जिस का प्रकरण है वहाँ उसी का ग्रहण करना योग्य है जैसे किसी ने किसी से कहा कि 'हे भृत्य ! त्वं सैन्धवमानय' अर्थात् तू सैन्धव को ले आ। तब उस को समय अर्थात् प्रकरण का विचार करना
~~~~~~

अवश्य है, क्योंकि सैन्धव नाम दो पदार्थों का है; एक घोड़े और दूसरा लवण का। जो स्वस्वामी का गमन समय हो तो घोड़े और भोजन का काल हो तो लवण को ले आना उचित है और जो गमन समय में लवण और भोजन-समय में घोड़े को ले आवे तो उसका स्वामी उस पर क्रुद्ध होकर कहेगा कि तू निर्बुद्धि पुरुष है। गमनसमय में लवण और भोजनकाल में घोड़े के लाने का क्या प्रयोजन था? तू प्रकरणवित् नहीं है, नहीं तो जिस समय में जिसको लाना चाहिए था उसी को लाता। जो तुझ को प्रकरण का विचार करना आवश्यक था वह तूने नहीं किया, इस से तू मूर्ख है, मेरे पास से चला जा। इससे क्या सिद्ध हुआ कि जहाँ जिसका ग्रहण करना उचित हो वहाँ उसी अर्थ का ग्रहण करना चाहिए तो ऐसा ही हम और आप सब लोगों को मानना और करना भी चाहिए।

अथ मन्त्रार्थः

ओं खम्ब्रह्म ॥१॥ यजुः अ० ४० । मं० १७

देखिए वेदों में ऐसे-ऐसे प्रकरणों में 'ओम्' आदि परमेश्वर के नाम हैं।

ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत॥ २॥ -छान्दोग्य उपनिषत् ।

ओमित्येतदक्षरमिदꣳ सर्वं तस्योपव्याख्यानम्॥ ३॥-माण्डूक्य।

सर्वे वेदा यत्पदमामनन्ति तपांसि सर्वाणि च यद्वदन्ति ।
यदिच्छन्तो ब्रह्मचर्यं चरन्ति तत्ते पदं संग्रहेण ब्रवीम्योमित्येतत्॥ ४॥

-कठोपनिषत्, वल्ली २। मं० १५॥

प्रशासितारं सर्वेषामणीयांसमणोरपि ।
रुक्माभं स्वप्नधीगम्यं विद्यात्तं पुरुषं परम्॥ ५॥
एतमग्निं वदन्त्येके मनुमन्ये प्रजापतिम् ।
इन्द्रमेके परे प्राणमपरे ब्रह्म शाश्वतम्॥ ६॥

-मनुस्मृति अध्याय १२। श्लोक १२२, १२३।

स ब्रह्मा स विष्णुः स रुद्रस्स शिवस्सोऽक्षरस्स परमः स्वराट्।
स इन्द्रस्स कालाग्निस्स चन्द्रमाः॥ ७॥ -कैवल्य उपनिषत्।

इन्द्रं मित्रं वरुणमग्निमाहुरथो दिव्यस्स सुपर्णो गरुत्मान् ।
एकं सद्विप्रा बहुधा वदन्त्यग्निं यमं मातरिश्वानमाहुः ॥८॥

-ऋग्वेद मं० १। सूक्त १६४। मन्त्र ४६॥

भूरसि भूमिरस्यदितिरसि विश्वधाया विश्वस्य भुवनस्य धर्त्री ।
पृथिवीं यच्छ पृथिवीं दृꣳह पृथिवीं मा हिꣳसीः ॥९॥

-यजुर्वेद अध्याय १३। मन्त्र १८॥

१ २ ३ १र २र ३ २ ३ २ ३ १ २
इन्द्रो मह्ना रोदसी पप्रथच्छव इन्द्रः सूर्य्यमरोचयत् ।
१ २ ३ २ ३ १ २ ३ १ २ ३ २ ३ १ २
इन्द्रे ह विश्वा भुवनानि येमिर इन्द्रे स्वानास इन्दवः ॥१०॥

-सामवेद प्रपाठक ७। त्रिक ८। मन्त्र २॥

प्राणाय नमो यस्य सर्वमिदं वशे।
यो भूतः सर्वस्येश्वरो यस्मिन्त्सर्वं प्रतिष्ठितम् ॥११॥

—अथर्ववेद काण्ड ११। प्रपाठक २४। अ० २। मन्त्र ८॥

अर्थ—यहाँ इन प्रमाणों के लिखने में तात्पर्य यही है कि जो ऐसे-ऐसे प्रमाणों में ओङ्कारादि नामों से परमात्मा का ग्रहण होता है लिख आये तथा परमेश्वर का कोई भी नाम अनर्थक नहीं, जैसे लोक में दरिद्री आदि के धनपति आदि नाम होते हैं। इससे यह सिद्ध हुआ कि कहीं गौणिक, कहीं कार्मिक और कहीं स्वाभाविक अर्थों के वाचक हैं।

'ओम्' आदि नाम सार्थक हैं—जैसे **(ओं खं०) 'अवतीत्योम्, आकाशमिव व्यापकत्वात् खम्, सर्वेभ्यो बृहत्वाद् ब्रह्म'** रक्षा करने से **(ओम्)**, आकाशवत् व्यापक होने से **(खम्)**, सब से बड़ा होने से ईश्वर का नाम **(ब्रह्म)** है॥ १॥

(ओ३म्) जिसका नाम है और जो कभी नष्ट नहीं होता, उसी की उपासना करनी योग्य है, अन्य की नहीं॥ २॥

(ओमित्येत०) सब वेदादि शास्त्रों में परमेश्वर का प्रधान और निज नाम **'ओ३म्'** को कहा है, अन्य सब गौणिक नाम हैं॥ ३॥

(सर्वे वेदा०) क्योंकि सब वेद सब धर्मानुष्ठानरूप तपश्चरण जिसका कथन और मान्य करते और जिसकी प्राप्ति की इच्छा करके ब्रह्मचर्य्याश्रम करते हैं, उसका नाम **'ओ३म्'** है॥ ४॥

(प्रशासिता०) जो सब को शिक्षा देनेहारा, सूक्ष्म से सूक्ष्म, स्वप्रकाशस्वरूप, समाधिस्थ बुद्धि से जानने योग्य है, उसको परम पुरुष जानना चाहिए॥ ५॥

और स्वप्रकाश होने से **'अग्नि'** विज्ञानस्वरूप होने से **'मनु'** और सब का पालन करने से **'प्रजापति'** और परमैश्वर्य्यवान् होने से **'इन्द्र'** सब का जीवनमूल होने से **'प्राण'** और निरन्तर व्यापक होने से परमेश्वर का नाम **'ब्रह्म'** है॥ ६॥

(स ब्रह्मा स विष्णुः०) सब जगत् के बनाने से **'ब्रह्मा'**, सर्वत्र व्यापक होने से **'विष्णु'**, दुष्टों को दण्ड देके रुलाने से **'रुद्र'**, मङ्गलमय और सब का कल्याणकर्त्ता होने से **'शिव'**, **'यः सर्वमश्नुते न क्षरति न विनश्यति तदक्षरम्' 'यः स्वयं राजते स स्वराट्' 'योऽग्निरिव कालः कलयिता प्रलयकर्त्ता स कालाग्निरीश्वरः'** **(अक्षर)** जो सर्वत्र व्याप्त अविनाशी, **(स्वराट्)** स्वयं प्रकाशस्वरूप और **(कालाग्नि०)** प्रलय में सब का काल और काल का भी काल है, इसलिए परमेश्वर का नाम **'कालाग्नि'** है॥ ७॥

(इन्द्रं मित्रं) जो एक अद्वितीय सत्यब्रह्म वस्तु है, उसी के इन्द्रादि सब नाम हैं। **'द्युषु शुद्धेषु पदार्थेषु भवो दिव्यः', 'शोभनानि पर्णानि पालनानि पूर्णानि कर्माणि वा यस्य सः', 'यो गुर्वात्मा स गरुत्मान्', 'यो मातरिश्वा वायुरिव बलवान् स मातरिश्वा'**, **(दिव्य)** जो प्रकृत्यादि दिव्य पदार्थों में व्याप्त, **(सुपर्ण)** जिसके उत्तम पालन और पूर्ण कर्म हैं, **(गरुत्मान्)** जिसका आत्मा अर्थात् स्वरूप महान् है, **(मातरिश्वा)** जो वायु के समान अनन्त बलवान् है, इसलिए परमात्मा के **'दिव्य', 'सुपर्ण', 'गरुत्मान्'** और **'मातरिश्वा'** ये नाम हैं। शेष नामों का अर्थ आगे लिखेंगे॥८॥

(भूमिरसि०) 'भवन्ति भूतानि यस्यां सा भूमिः' जिसमें सब भूत प्राणी

होते हैं, इसलिए ईश्वर का नाम 'भूमि' है। शेष नामों का अर्थ आगे लिखेंगे॥ ९ ॥

(इन्द्रो मह्ना०) इस मन्त्र में 'इन्द्र' परमेश्वर ही का नाम है, इसलिए यह प्रमाण लिखा है॥१०॥

(प्राणाय) जैसे प्राण के वश सब शरीर इन्द्रियाँ होती हैं वैसे परमेश्वर के वश में सब जगत् रहता है॥ ११ ॥

इत्यादि प्रमाणों के ठीक-ठीक अर्थों के जानने से इन नामों करके परमेश्वर ही का ग्रहण होता है। क्योंकि **'ओ३म्'** और अग्न्यादि नामों के मुख्य अर्थ से परमेश्वर ही का ग्रहण होता है। जैसा कि व्याकरण, निरुक्त, ब्राह्मण, सूत्रादि ऋषि मुनियों के व्याख्यानों से परमेश्वर का ग्रहण देखने में आता है, वैसा ग्रहण करना सब को योग्य है, परन्तु **'ओ३म्'** यह तो केवल परमात्मा ही का नाम है और अग्नि आदि नामों से परमेश्वर के ग्रहण में प्रकरण और विशेषण नियमकारक हैं। इससे क्या सिद्ध हुआ कि जहाँ-जहाँ स्तुति, प्रार्थना, उपासना, सर्वज्ञ, व्यापक, शुद्ध, सनातन और सृष्टिकर्त्ता आदि विशेषण लिखे हैं वहीं-वहीं इन नामों से परमेश्वर का ग्रहण होता है। और जहाँ-जहाँ ऐसे प्रकरण हैं कि-

ततो॑ वि॒राड॑जायत वि॒राजो॒ अधि॒पूरु॑षः ।
श्रोत्रा॑द्वा॒युश्च॑ प्रा॒णश्च॒ मुखा॑द॒ग्निर॑जायत ॥
तेन॑ दे॒वा अ॑यजन्त । प॒श्चाद्भूमि॒मथो॑ पु॒रः ॥　　यजुः अ० ३१

तस्माद्वा एतस्मादात्मन आकाशः सम्भूतः। आकाशाद्वायुः। वायोरग्निः। अग्नेरापः। अद्भ्यः पृथिवी। पृथिव्या ओषधयः। ओषधिभ्योऽन्नम्। अन्नाद्रेतः। रेतसः पुरुषः। स वा एष पुरुषोऽन्नरसमयः।　—यह तैत्तिरीयोपनिषद् का वचन है।

ऐसे प्रमाणों में विराट्, पुरुष, देव, आकाश, वायु, अग्नि, जल, भूमि आदि नाम लौकिक पदार्थों के होते हैं, क्योंकि जहाँ-जहाँ उत्पत्ति, स्थिति, प्रलय, अल्पज्ञ, जड़, दृश्य आदि विशेषण भी लिखे हों, वहाँ-वहाँ परमेश्वर का ग्रहण नहीं होता। वह उत्पत्ति आदि व्यवहारों से पृथक् हैं और उपरोक्त मन्त्रों में उत्पत्ति आदि व्यवहार हैं, इसी से यहाँ विराट् आदि नामों से परमात्मा का ग्रहण न हो के संसारी पदार्थों का ग्रहण होता है। किन्तु जहाँ-जहाँ सर्वज्ञादि विशेषण हों, वहीं-वहीं परमात्मा और जहाँ-जहाँ इच्छा, द्वेष, प्रयत्न, सुख, दुःख और अल्पज्ञादि विशेषण हों, वहाँ-वहाँ जीव का ग्रहण होता है, ऐसा सर्वत्र समझना चाहिए। क्योंकि परमेश्वर का जन्म-मरण कभी नहीं होता, इससे विराट् आदि नाम और जन्मादि विशेषणों से जगत् के जड़ और जीवादि पदार्थों का ग्रहण करना उचित है, परमेश्वर का नहीं। अब जिस प्रकार विराट् आदि नामों से परमेश्वर का ग्रहण होता है, वह प्रकार नीचे लिखे प्रमाणे जानो।

अथ ओङ्कारार्थः

१.　'वि' उपसर्गपूर्वक **(राजृ दीप्तौ)** इस धातु से क्विप् प्रत्यय करने से 'विराट्' शब्द सिद्ध होता है। **'यो विविधं नाम चराऽचरं जगद्राजयति प्रकाशयति स विराट्'** विविध अर्थात् जो बहु प्रकार के जगत् को प्रकाशित करे, इससे **'विराट्'** नाम से परमेश्वर का ग्रहण होता है।

२.　**(अञ्चु गतिपूजनयोः)(अग, अगि, इण् गत्यर्थक)** धातु हैं, इनसे 'अग्नि'

शब्द सिद्ध होता है। **'गतेस्त्रयोऽर्थाः ज्ञानं गमनं प्राप्तिश्चेति, पूजनं नाम सत्कारः।' 'योऽञ्चति, अच्यतेऽगत्यञ्चत्येति सोऽयमग्निः'** जो ज्ञानस्वरूप, सर्वज्ञ, जानने, प्राप्त होने और पूजा करने योग्य है, इससे उस परमेश्वर का नाम **'अग्नि'** है।

३. **(विश प्रवेशने)** इस धातु से **'विश्व'** शब्द सिद्ध होता है। **'विशन्ति प्रविष्टानि सर्वाण्याकाशादीनि भूतानि यस्मिन्। यो वाऽऽकाशादिषु सर्वेषु भूतेषु प्रविष्टः स विश्व ईश्वरः'** जिस में आकाशादि सब भूत प्रवेश कर रहे हैं अथवा जो इन में व्याप्त होके प्रविष्ट हो रहा है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'विश्व'** है, इत्यादि नामों का ग्रहण अकारमात्र से होता है।

४. **'ज्योतिर्वै हिरण्यं, तेजो वै हिरण्यमित्यैतरेयशतपथब्राह्मणे' 'यो हिरण्यानां सूर्यादीनां तेजसां गर्भ उत्पत्तिनिमित्तमधिकरणं स हिरण्यगर्भः'** जिसमें सूर्य्यादि तेज वाले लोक उत्पन्न होके जिसके आधार रहते हैं अथवा जो सूर्यादि तेजःस्वरूप पदार्थों का गर्भ नाम, (उत्पत्ति) और निवासस्थान है, इससे उस परमेश्वर का नाम **'हिरण्यगर्भ'** है। इसमें यजुर्वेद के मन्त्र का प्रमाण—

हिरण्यगर्भः समवर्त्तताग्रे भूतस्य जातः पतिरेक आसीत्।
स दाधार पृथिवीं द्यामुतेमां कस्मै देवाय हविषा विधेम॥

इत्यादि स्थलों में 'हिरण्यगर्भ' से परमेश्वर ही का ग्रहण होता है।

५. **(वा गतिगन्धनयोः)** इस धातु से 'वायु' शब्द सिद्ध होता है। **(गन्धनं हिंसनम्) 'यो वाति चराऽचरञ्जगद्धरति बलिनां बलिष्ठः स वायुः'** जो चराऽचर जगत् का धारण, जीवन और प्रलय करता और सब बलवानों से बलवान् है, इससे उस ईश्वर का नाम **'वायु'** है।

६. **(तिज निशाने)** इस धातु से 'तेजः' और इससे तद्धित करने से 'तैजस' शब्द सिद्ध होता है। जो आप स्वयंप्रकाश और सूर्य्यादि तेजस्वी लोकों का प्रकाश करने वाला है, इससे ईश्वर का नाम **'तैजस'** है। इत्यादि नामार्थ उकारमात्र से ग्रहण होते हैं।

७. **(ईश ऐश्वर्ये)** इस धातु से 'ईश्वर' शब्द सिद्ध होता है। **'य ईष्टे सर्वैश्वर्यवान् वर्त्तते स ईश्वरः'** जिस का सत्य विचारशील ज्ञान और अनन्त ऐश्वर्य है, इससे उस परमात्मा का नाम **'ईश्वर'** है।

८, ९. **(दो अवखण्डने)** इस धातु से 'अदिति' और इससे तद्धित करने से 'आदित्य' शब्द सिद्ध होता है। **'न विद्यते विनाशो यस्य सोऽयमदितिः, अदितिरेव आदित्यः'** जिसका विनाश कभी न हो उसी ईश्वर की **'आदित्य'** संज्ञा है।

१०,११. **(ज्ञा अवबोधने)** **'प्र'** पूर्वक इस धातु से 'प्रज्ञ' और इससे तद्धित करने से 'प्राज्ञ' शब्द सिद्ध होता है। **'यः प्रकृष्टतया चराऽचरस्य जगतो व्यवहारं जानाति स प्रज्ञः, प्रज्ञ एव प्राज्ञः'** जो निर्भ्रान्त ज्ञानयुक्त सब चराऽचर जगत् के व्यवहार को यथावत् जानता है, इससे ईश्वर का नाम **'प्राज्ञ'** है। इत्यादि नामार्थ मकार से गृहीत होते हैं। जैसे एक-एक मात्रा से तीन-तीन अर्थ यहाँ व्याख्यात किये हैं वैसे ही अन्य नामार्थ भी ओङ्कार से जाने जाते हैं।

जो **(शन्नो मित्रः शं व०)** इस मन्त्र में मित्रादि नाम हैं वे भी परमेश्वर के हैं, क्योंकि स्तुति, प्रार्थना, उपासना श्रेष्ठ ही की की जाती है। श्रेष्ठ उसको कहते हैं जो अपने गुण, कर्म्म, स्वभाव और सत्य-सत्य व्यवहारों में सब से अधिक हो।

उन सब श्रेष्ठों में भी जो अत्यन्त श्रेष्ठ उस को परमेश्वर कहते हैं। जिस के तुल्य न कोई हुआ, न है और न होगा। जब तुल्य नहीं तो उससे अधिक क्योंकर हो सकता है? जैसे परमेश्वर के सत्य, न्याय, दया, सर्वसामर्थ्य और सर्वज्ञत्वादि अनन्त गुण हैं, वैसे अन्य किसी जड़ पदार्थ वा जीव के नहीं हैं। जो पदार्थ सत्य है, उस के गुण, कर्म्म, स्वभाव भी सत्य ही होते हैं। इसलिये सब मनुष्यों को योग्य है कि परमेश्वर ही की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करें, उससे भिन्न की कभी न करें। क्योंकि ब्रह्मा, विष्णु, महादेव नामक पूर्वज महाशय विद्वान्, दैत्य दानवादि निकृष्ट मनुष्य और अन्य साधारण मनुष्यों ने भी परमेश्वर ही में विश्वास करके उसी की स्तुति, प्रार्थना और उपासना करी, उससे भिन्न की नहीं की। वैसे हम सब को करना योग्य है। इस का विशेष विचार मुक्ति और उपासना के विषय में किया जायगा।

(प्रश्न) मित्रादि नामों से सखा और इन्द्रादि देवों के प्रसिद्ध व्यवहार देखने से उन्हीं का ग्रहण करना चाहिए।

(उत्तर) यहाँ उन का ग्रहण करना योग्य नहीं, क्योंकि जो मनुष्य किसी का मित्र है, वही अन्य का शत्रु और किसी से उदासीन भी देखने में आता है। इससे मुख्यार्थ में सखा आदि का ग्रहण नहीं हो सकता, किन्तु जैसा परमेश्वर सब जगत् का निश्चित मित्र, न किसी का शत्रु और न किसी से उदासीन है, इस से भिन्न कोई भी जीव इस प्रकार का कभी नहीं हो सकता। इसलिये परमात्मा ही का ग्रहण यहाँ होता है। हाँ, गौण अर्थ में मित्रादि शब्द से सुहृदादि मनुष्यों का ग्रहण होता है।

१२. (ञिमिदा स्नेहने) इस धातु से औणादिक 'क्त्र' प्रत्यय के होने से 'मित्र' शब्द सिद्ध होता है। **'मेद्यति, स्निह्यति स्निह्यते वा स मित्रः'** जो सब से स्नेह करके और सब को प्रीति करने योग्य है, इस से उस परमेश्वर का नाम **'मित्र'** है।

१३. (वृञ् वरणे, वर ईप्सायाम्) इन धातुओं से उणादि 'उनन्' प्रत्यय होने से 'वरुण' शब्द सिद्ध होता है। **'यः सर्वान् शिष्टान् मुमुक्षून्धर्मात्मनो वृणोत्यथवा यः शिष्टैर्मुमुक्षुभिर्धर्मात्मभिर्व्रियते वर्य्यते वा स वरुणः परमेश्वरः'** जो आत्मयोगी, विद्वान्, मुक्ति की इच्छा करने वाले मुक्त और धर्मात्माओं का स्वीकारकर्त्ता, अथवा जो शिष्ट मुमुक्षु मुक्त और धर्मात्माओं से ग्रहण किया जाता है वह ईश्वर 'वरुण' संज्ञक है। अथवा 'वरुणो नाम वरः श्रेष्ठः' जिसलिए परमेश्वर सब से श्रेष्ठ है, इसीलिए उस का नाम **'वरुण'** है।

१४. (ऋ गतिप्रापणयोः) इस धातु से 'यत्' प्रत्यय करने से 'अर्य्य' शब्द सिद्ध होता है और 'अर्य्य' पूर्वक (माङ् माने) इस धातु से 'कनिन्' प्रत्यय होने से 'अर्य्यमा' शब्द सिद्ध होता है। **'योऽर्य्यान् स्वामिनो न्यायाधीशान् मिमीते मान्यान् करोति सोऽर्यमा'** जो सत्य न्याय के करनेहारे मनुष्यों का मान्य और पाप तथा पुण्य करने वालों को पाप और पुण्य के फलों का यथावत् सत्य-सत्य नियमकर्ता है, इसी से उस परमेश्वर का नाम **'अर्य्यमा'** है।

१५. (इदि परमैश्वर्ये) इस धातु से 'रन्' प्रत्यय करने से 'इन्द्र' शब्द सिद्ध होता है। **'य इन्दति परमैश्वर्यवान् भवति स इन्द्रः परमेश्वरः'** जो अखिल ऐश्वर्ययुक्त है, इस से उस परमात्मा का नाम **'इन्द्र'** है।

१६. 'बृहत्' शब्दपूर्वक **(पा रक्षणे)** इस धातु से 'डति' प्रत्यय, बृहत् के तकार का लोप और सुडागम होने से **'बृहस्पति'** शब्द सिद्ध होता है। **'यो बृहतामाकाशादीनां पतिः स्वामी पालयिता स बृहस्पतिः'** जो बड़ों से भी बड़ा और बड़े आकाशादि ब्रह्माण्डों का स्वामी है, इस से उस परमेश्वर का नाम **'बृहस्पति'** है।

१७. **(विष्लृ व्याप्तौ)** इस धातु से 'नु' प्रत्यय होकर 'विष्णु' शब्द सिद्ध हुआ है। **'वेवेष्टि व्याप्नोति चराऽचरं जगत् स विष्णुः'** चर और अचररूप जगत् में व्यापक होने से परमात्मा का नाम **'विष्णु'** है।

१८. **'उरुर्महान् क्रमः पराक्रमो यस्य स उरुक्रमः'** अनन्त पराक्रमयुक्त होने से परमात्मा का नाम **'उरुक्रम'** है। जो परमात्मा (उरुक्रमः) महापराक्रमयुक्त (मित्रः) सब का सुहृत् अविरोधी है, वह (शम्) सुखकारक, वह (वरुणः) सर्वोत्तम (शम्) सुखस्वरूप, वह (अर्यमा) (शम्) सुखप्रचारक, वह (इन्द्रः) (शम्) सकल ऐश्वर्यदायक, वह (बृहस्पतिः) सब का अधिष्ठाता (शम्) विद्याप्रद और (विष्णुः) जो सब में व्यापक परमेश्वर है, वह (नः) हमारा कल्याणकारक (भवतु) हो।

१९. **(वायो ते ब्रह्मणे नमोऽस्तु) (बृह बृहि वृद्धौ)** इन धातुओं से **'ब्रह्म'** शब्द सिद्ध हुआ है। जो सब के ऊपर विराजमान, सब से बड़ा, अनन्तबलयुक्त परमात्मा है, उस ब्रह्म को हम नमस्कार करते हैं। हे परमेश्वर ! **(त्वमेव प्रत्यक्षं ब्रह्मासि)** आप ही अन्तर्यामिरूप से प्रत्यक्ष ब्रह्म हो **(त्वामेव प्रत्यक्षं ब्रह्म वदिष्यामि)** मैं आप ही को प्रत्यक्ष ब्रह्म कहूँगा, क्योंकि आप सब जगह में व्याप्त होके सब को नित्य ही प्राप्त हैं **(ऋतं वदिष्यामि)** जो आपकी वेदस्थ यथार्थ आज्ञा है उसी को मैं सब के लिए उपदेश और आचरण भी करूँगा, **(सत्यं वदिष्यामि)** सत्य बोलूँ, सत्य मानूं और सत्य ही करूँगा **(तन्मामवतु)** सो आप मेरी रक्षा कीजिए **(तद्वक्तारमवतु)** सो आप मुझ आप्त सत्यवक्ता की रक्षा कीजिए कि जिस से आप की आज्ञा में मेरी बुद्धि स्थिर होकर, विरुद्ध कभी न हो। क्योंकि जो आपकी आज्ञा है, वही धर्म और जो विरुद्ध, वही अधर्म है। **'अवतु मामवतु वक्तारम्'** यह दूसरी वार पाठ अधिकार्थ के लिये है। जैसे 'कश्चित् कञ्चित् प्रति वदति त्वं ग्रामं गच्छ गच्छ' इसमें दो वार क्रिया के उच्चारण से तू शीघ्र ही ग्राम को जा ऐसा सिद्ध होता है। ऐसे ही यहाँ कि आप मेरी अवश्य रक्षा करो अर्थात् धर्म में सुनिश्चित और अधर्म से घृणा सदा करूँ, ऐसी कृपा मुझ पर कीजिए। मैं आपका बड़ा उपकार मानूँगा।

(ओ३म् शान्तिः शान्तिः शान्तिः) इस में तीन वार शान्तिपाठ का यह प्रयोजन है कि त्रिविध ताप अर्थात् इस संसार में तीन प्रकार के दुःख हैं—एक **'आध्यात्मिक'** जो आत्मा शरीर में अविद्या, राग, द्वेष, मूर्खता और ज्वर पीड़ादि होते हैं। दूसरा **'आधिभौतिक'** जो शत्रु, व्याघ्र और सर्पादि से प्राप्त होता है। तीसरा **'आधिदैविक'** अर्थात् जो अतिवृष्टि, अतिशीत, अति उष्णता, मन और इन्द्रियों की अशान्ति से होता है। इन तीन प्रकार के क्लेशों से आप हम लोगों को दूर करके कल्याणकारक कर्मों में सदा प्रवृत्त रखिए। क्योंकि आप ही कल्याणस्वरूप, सब संसार के कल्याणकर्त्ता और धार्मिक मुमुक्षुओं को कल्याण के दाता हैं। इसलिए आप स्वयम् अपनी करुणा से सब जीवों के हृदय में प्रकाशित हूजिए कि जिस से सब जीव धर्म का आचरण और अधर्म को छोड़के परमानन्द को प्राप्त हों और दुःखों से पृथक् रहैं ।

'सूर्य्य आत्मा जगतस्तस्थुषश्च'

२०. इस यजुर्वेद के वचन से जो जगत् नाम प्राणी, चेतन और जंगम अर्थात् जो चलते-फिरते हैं, **'तस्थुषः'** अप्राणी अर्थात् **स्थावर जड़** अर्थात् **पृथिवी** आदि हैं, उन सब के आत्मा होने और स्वप्रकाशरूप सब के प्रकाश करने से परमेश्वर का नाम **'सूर्य्य'** है।

२१, २२. (अत सातत्यगमने) इस धातु से 'आत्मा' शब्द सिद्ध होता है। **'योऽतति व्याप्नोति स आत्मा'** जो सब जीवादि जगत् में निरन्तर व्यापक हो रहा है। **'परश्चासावात्मा च य आत्मभ्यो जीवेभ्यः सूक्ष्मेभ्यः परोऽतिसूक्ष्मः स परमात्मा'** जो सब जीव आदि से उत्कृष्ट और जीव, प्रकृति तथा आकाश से भी अतिसूक्ष्म और सब जीवों का अन्तर्यामी आत्मा है, इस से ईश्वर का नाम **'परमात्मा'** है।

२३. सामर्थ्यवाले का नाम ईश्वर है। **'य ईश्वरेषु समर्थेषु परमः श्रेष्ठः स परमेश्वरः'** जो ईश्वरों अर्थात् समर्थों में समर्थ, जिस के तुल्य कोई भी न हो, उस का नाम **'परमेश्वर'** है।

२४. **(षुञ् अभिषवे, षूङ् प्राणिगर्भविमोचने)** इन धातुओं से 'सविता' शब्द सिद्ध होता है। **'अभिषवः प्राणिगर्भविमोचनं चोत्पादनम्। यश्चराचरं जगत् सुनोति सूते वोत्पादयति स सविता परमेश्वरः'** जो सब जगत् की उत्पत्ति करता है, इसलिए परमेश्वर का नाम **'सविता'** है।

२५. **(दिवु क्रीडाविजिगीषाव्यवहारद्युतिस्तुतिमोदमदस्वप्नकान्तिगतिषु)** इस धातु से 'देव' शब्द सिद्ध होता है। (क्रीडा) जो शुद्ध जगत् को क्रीडा कराने (विजिगीषा) धार्मिकों को जिताने की इच्छायुक्त (व्यवहार) सब चेष्टा के साधनोप-साधनों का दाता (द्युति) स्वयंप्रकाशस्वरूप, सब का प्रकाशक (स्तुति) प्रशंसा के योग्य (मोद) आप आनन्दस्वरूप और दूसरों को आनन्द देनेहारा (मद) मदोन्मत्तों का ताड़नेहारा (स्वप्न) सब के शयनार्थ रात्रि और प्रलय का करनेहारा (कान्ति) कामना के योग्य और (गति) ज्ञानस्वरूप है, इसलिये उस परमेश्वर का नाम 'देव' है। अथवा **'यो दीव्यति क्रीडति स देवः'** जो अपने स्वरूप में आनन्द से आप ही क्रीडा करे अथवा किसी के सहाय के विना क्रीडावत् सहज स्वभाव से सब जगत् को बनाता वा सब क्रीडाओं का आधार है। **'विजिगीषते स देवः'** जो सब का जीतनेहारा, स्वयम् अजेय अर्थात् जिस को कोई भी न जीत सके। **'व्यवहारयति स देवः'** जो न्याय और अन्यायरूप व्यवहारों का जनाने और उपदेष्टा।' **'यश्चराचरं जगत् द्योतयति'** जो सब का प्रकाशक। **'यः स्तूयते स देवः'** जो सब मनुष्यों को प्रशंसा के योग्य और निन्दा के योग्य न हो। **'यो मोदयति स देवः'** जो स्वयम् आनन्दस्वरूप और दूसरों को आनन्द कराता, जिस को दुःख का लेश भी न हो। **'यो माद्यति स देवः'** जो सदा हर्षित, शोक रहित और दूसरों को हर्षित करने और दुःखों से पृथक् रखनेवाला। **'यः स्वापयति स देवः'** जो प्रलय समय अव्यक्त में सब जीवों को सुलाता। **'यः कामयते काम्यते वा स देवः'** जिस के सब सत्य काम और जिस की प्राप्ति की कामना सब शिष्ट करते हैं। **'यो गच्छति गम्यते वा स देवः'** जो सब में व्याप्त और जानने के योग्य है, इस से उस परमेश्वर का नाम **'देव'** है।

२६. **(कुबि आच्छादने)** इस धातु से 'कुबेर' शब्द सिद्ध होता है। **'यः सर्वं**

कुम्बति स्वव्याप्त्याच्छादयति स कुबेरो जगदीश्वरः' जो अपनी व्याप्ति से सब का आच्छादन करे, इस से उस परमेश्वर का नाम **'कुबेर'** है।

२७. **(पृथु विस्तारे)** इस धातु से 'पृथिवी' शब्द सिद्ध होता है।' **'यः पर्थति सर्वं जगद्विस्तृणाति तस्मात् स पृथिवी'** जो सब विस्तृत जगत् का विस्तार करने वाला है, इसलिए उस ईश्वर का नाम **'पृथिवी'** है।

२८. **(जल घातने)** इस धातु से 'जल' शब्द सिद्ध होता है, **'जलति घातयति दुष्टान् सङ्घातयति अव्यक्तपरमाण्वादीन् तद् ब्रह्म जलम्'** जो दुष्टों का ताड़न और अव्यक्त तथा परमाणुओं का अन्योऽन्य संयोग वा वियोग करता है, वह परमात्मा **'जल'** संज्ञक कहाता है।

२९. **(काशृ दीप्तौ)** इस धातु से 'आकाश' शब्द सिद्ध होता है, **'यः सर्वतः सर्वं जगत् प्रकाशयति स आकाशः'** जो सब ओर से सब जगत् का प्रकाशक है, इसलिए उस परमात्मा का नाम **'आकाश'** है।

३०,३१,३२. **(अद् भक्षणे)** इस धातु से **'अन्न'** शब्द सिद्ध होता है।

> **अद्यतेऽत्ति च भूतानि तस्मादन्नं तदुच्यते। अहमन्नमहमन्नमहमन्नम्।**
> **अहमन्नादोऽहमन्नादोऽहमन्नादः॥** तैत्ति० उपनि०।
> **अत्ता चराऽचरग्रहणात्॥** यह व्यासमुनिकृत शारीरक सूत्र है।

जो सब को भीतर रखने, सब को ग्रहण करने योग्य, चराऽचर जगत् का ग्रहण करने वाला है, इस से ईश्वर के **'अन्न', 'अन्नाद'** और **'अत्ता'** नाम हैं। और जो इस में तीन वार पाठ है सो आदर के लिए है। जैसे गूलर के फल में कृमि उत्पन्न होके उसी में रहते और नष्ट हो जाते हैं, वैसे परमेश्वर के बीच में सब जगत् की अवस्था है।

३३. **(वस निवासे)** इस धातु से 'वसु' शब्द सिद्ध हुआ है। **'वसन्ति भूतानि यस्मिन्नथवा यः सर्वेषु वसति स वसुरीश्वरः'** जिसमें सब आकाशादि भूत वसते हैं और जो सब में वास कर रहा है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'वसु'** है।

३४. **(रुदिर् अश्रुविमोचने)** इस धातु से 'णिच्' प्रत्यय होने से 'रुद्र' शब्द सिद्ध होता है। **'यो रोदयत्यन्यायकारिणो जनान् स रुद्रः'** जो दुष्ट कर्म करनेहारों को रुलाता है, इससे परमेश्वर का नाम **'रुद्र'** है।

यन्मनसा ध्यायति तद्वाचा वदति, यद्वाचा वदति तत् कर्मणा करोति यत् कर्मणा करोति तदभिसम्पद्यते॥ यह यजुर्वेद के ब्राह्मण का वचन है।

जीव जिस का मन से ध्यान करता उस को वाणी से बोलता, जिस को वाणी से बोलता उस को कर्म से करता, जिस को कर्म से करता उसी को प्राप्त होता है। इस से क्या सिद्ध हुआ कि जो जीव जैसा कर्म करता है वैसा ही फल पाता है। जब दुष्ट कर्म करनेवाले जीव ईश्वर की न्यायरूपी व्यवस्था से दुःखरूप फल पाते, तब रोते हैं और इसी प्रकार ईश्वर उन को रुलाता है, इसलिए परमेश्वर का नाम **'रुद्र'** है।

३५. **आपो नारा इति प्रोक्ता आपो वै नरसूनवः।**
ता यदस्यायनं पूर्वं तेन नारायणः स्मृतः॥ –मनु० अ० १। श्लोक १०॥

जल और जीवों का नाम नारा है, वे अयन अर्थात् निवासस्थान हैं, जिसका इसलिए सब जीवों में व्यापक परमात्मा का नाम **'नारायण'** है।

३६. **(चदि आह्लादे)** इस धातु से 'चन्द्र' शब्द सिद्ध होता है। **'यश्चन्दति चन्दयति वा स चन्द्रः'** जो आनन्दस्वरूप और सब को आनन्द देनेवाला है, इसलिए ईश्वर का नाम **'चन्द्र'** है।

३७. **(मगि गत्यर्थक)** धातु से **'मङ्गेरलच्'** इस सूत्र से 'मङ्गल' शब्द सिद्ध होता है। **'यो मङ्गति मङ्गयति वा स मङ्गलः'** जो आप मङ्गलस्वरूप और सब जीवों के मङ्गल का कारण है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'मङ्गल'** है।

३८. **(बुध अवगमने)** इस धातु से 'बुध' शब्द सिद्ध होता है। **'यो बुध्यते बोध्यते वा स बुधः'** जो स्वयं बोधस्वरूप और सब जीवों के बोध का कारण है। इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'बुध'** है। 'बृहस्पति' शब्द का अर्थ कह दिया।

३९. **(ईशुचिर् पूतीभावे)** इस धातु से 'शुक्र' शब्द सिद्ध हुआ है। **'यः शुच्यति शोचयति वा स शुक्रः'** जो अत्यन्त पवित्र और जिसके संग से जीव भी पवित्र हो जाता है, इसलिये ईश्वर का नाम **'शुक्र'** है।

४०. **(चर गतिभक्षणयोः)** इस धातु से 'शनैस्' अव्यय उपपद होने से 'शनैश्चर' शब्द सिद्ध हुआ है। **'यः शनैश्चरति स शनैश्चरः'** जो सब में सहज से प्राप्त धैर्यवान् है, इससे उस परमेश्वर का नाम **'शनैश्चर'** है।

४१. **(रह त्यागे)** इस धातु से 'राहु' शब्द सिद्ध होता है। **'यो रहति परित्यजति दुष्टान् राहयति त्याजयति स राहुरीश्वरः'।** जो एकान्तस्वरूप जिसके स्वरूप में दूसरा पदार्थ संयुक्त नहीं, जो दुष्टों को छोड़ने और अन्य को छुड़ाने हारा है, इससे परमेश्वर का नाम **'राहु'** है।

४२. **(कित निवासे रोगापनयने च)** इस धातु से 'केतु' शब्द सिद्ध होता है। **'यः केतयति चिकित्सति वा स केतुरीश्वरः'** जो सब जगत् का निवासस्थान, सब रोगों से रहित और मुमुक्षुओं को मुक्ति समय में सब रोगों से छुड़ाता है, इसलिए उस परमात्मा का नाम **'केतु'** है।

४३. **(यज देवपूजासङ्गतिकरणदानेषु)** इस धातु से 'यज्ञ' शब्द सिद्ध होता है। **'यज्ञो वै विष्णुः'** यह ब्राह्मण ग्रन्थ का वचन है। **'यो यजति विद्वद्भिरिज्यते वा स यज्ञः'** जो सब जगत् के पदार्थों को संयुक्त करता और सब विद्वानों का पूज्य है, और ब्रह्मा से लेके सब ऋषि मुनियों का पूज्य था, है और होगा, इससे उस परमात्मा का नाम **'यज्ञ'** है, क्योंकि वह सर्वत्र व्यापक है।

४४. **(हुदानाऽदनयोः, आदाने चेत्येके)** इस धातु से 'होता' शब्द सिद्ध हुआ है। **'यो जुहोति स होता'** जो जीवों को देने योग्य पदार्थों का दाता और ग्रहण करने योग्यों का ग्राहक है, इससे उस ईश्वर का नाम **'होता'** है।

४५. **(बन्ध बन्धने)** इससे 'बन्धु' शब्द सिद्ध होता है। **'यः स्वस्मिन् चराचरं जगद् बध्नाति बन्धुवद्धर्मात्मनां सुखाय सहायो वा वर्त्तते स बन्धुः'** जिस ने अपने में सब लोकलोकान्तरों को नियमों से बद्ध कर रक्खे और सहोदर के समान सहायक है, इसी से अपनी-अपनी परिधि वा नियम का उल्लंघन नहीं कर सकते। जैसे भ्राता भाइयों का सहायकारी होता है, वैसे परमेश्वर भी पृथिव्यादि लोकों के धारण, रक्षण और सुख देने से **'बन्धु'** संज्ञक है।

४६. **(पा रक्षणे)** इस धातु से 'पिता' शब्द सिद्ध हुआ है। **'यः पाति सर्वान् स पिता'** जो सब का रक्षक जैसा पिता अपने सन्तानों पर सदा कृपालु होकर उन की उन्नति चाहता है, वैसे ही परमेश्वर सब जीवों की उन्नति चाहता है, इस से उस

का नाम **'पिता'** है।

४७. **'यः पितृणां पिता स पितामहः'** जो पिताओं का भी पिता है, इससे उस परमेश्वर का नाम **'पितामहः'** है।

४८. **'यः पितामहानां पिता स प्रपितामहः'** जो पिताओं के पितरों का पिता है इससे परमेश्वर का नाम **'प्रपितामह'** है।

४९. **'यो मिमीते मानयति सर्वाञ्जीवान् स माता'** जैसे पूर्णकृपायुक्त जननी अपने सन्तानों का सुख और उन्नति चाहती है, वैसे परमेश्वर भी सब जीवों की बढ़ती चाहता है, इस से परमेश्वर का नाम **'माता'** है।

५०. **(चर गतिभक्षणयोः)** आङ्पूर्वक इस धातु से 'आचार्य्य' शब्द सिद्ध होता है। **'य आचारं ग्राहयति, सर्वा विद्या बोधयति स आचार्य ईश्वरः'** जो सत्य आचार का ग्रहण करानेहारा और सब विद्याओं की प्राप्ति का हेतु होके सब विद्या प्राप्त कराता है, इससे परमेश्वर का नाम **'आचार्य'** है।

५१. **(गॄ शब्दे)** इस धातु से 'गुरु' शब्द बना है। **'यो धर्म्यान् शब्दान् गृणात्युपदिशति स गुरुः' 'स पूर्वेषामपि गुरुः कालेनानवच्छेदात्'**। योग०। जो सत्यधर्मप्रतिपादक, सकल विद्यायुक्त वेदों का उपदेश करता, सृष्टि की आदि में अग्नि, वायु, आदित्य, अङ्गिरा और ब्रह्मादि गुरुओं का भी गुरु और जिसका नाश कभी नहीं होता, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'गुरु'** है।

५२. **(अज गतिक्षेपणयोः, जनी प्रादुर्भावे)** इन धातुओं से 'अज' शब्द बनता है। **'योऽजति सृष्टिं प्रति सर्वान् प्रकृत्यादीन् पदार्थान् प्रक्षिपति, जानाति, जनयति च कदाचिन्न जायते सोऽजः'** जो सब प्रकृति के अवयव आकाशादि भूत परमाणुओं को यथायोग्य मिलाता, जानता, शरीर के साथ जीवों का सम्बन्ध करके जन्म देता और स्वयं कभी जन्म नहीं लेता, इससे उस ईश्वर का नाम **'अज'** है।

५३. **(बृह बृहि वृद्धौ)** इन धातुओं से 'ब्रह्मा' शब्द सिद्ध होता है। **'योऽखिलं जगन्निर्माणेन बर्हति वर्द्धयति स ब्रह्मा'** जो सम्पूर्ण जगत् को रच के बढ़ाता है, इसलिए परमेश्वर का नाम **'ब्रह्मा'** है।

५४, ५५, ५६. **'सत्यं ज्ञानमनन्तं ब्रह्म'** यह तैत्तिरीयोपनिषद् का वचन है।

'सन्तीति सन्तस्तेषु सत्सु साधु तत्सत्यम्। यज्जानाति चराऽचरं जगत्तज्ज्ञानम्। न विद्यतेऽन्तो- ऽवधिर्मर्यादा यस्य तदनन्तम्। सर्वेभ्यो बृहत्त्वाद् ब्रह्म' जो पदार्थ हों उनको सत् कहते हैं, उनमें साधु होने से परमेश्वर का नाम 'सत्य' है। जो जाननेवाला है, इससे परमेश्वर का नाम 'ज्ञान' है। जिसका अन्त अवधि मर्यादा अर्थात् इतना लम्बा, चौड़ा, छोटा, बड़ा है, ऐसा परिमाण नहीं है, इसलिए परमेश्वर के नाम **'सत्य'**, **'ज्ञान'** और **'अनन्त'** हैं।

५७. **(डुदाञ दाने)** आङ्पूर्वक इस धातु से 'आदि' शब्द और नञ्पूर्वक 'अनादि' शब्द सिद्ध होता है। **'यस्मात् पूर्वं नास्ति परं चास्ति स आदिरित्युच्यते।'**, **'न विद्यते आदिः कारणं यस्य सोऽनादिरीश्वरः'** जिसके पूर्व कुछ न हो और परे हो, उसको आदि कहते हैं, जिस का आदि कारण कोई भी नहीं है, इसलिए परमेश्वर का नाम **'अनादि'** है।

५८. **(टुनदि समृद्धौ)** आङ्पूर्वक इस धातु से 'आनन्द' शब्द बनता है। **'आनन्दन्ति सर्वे मुक्ता यस्मिन् यद्वा यः सर्वाञ्जीवानानन्दयति स आनन्दः'** जो

आनन्दस्वरूप, जिस में सब मुक्त जीव आनन्द को प्राप्त होते और सब धर्मात्मा जीवों को आनन्दयुक्त करता है, इससे ईश्वर का नाम **'आनन्द'** है।

५९. **(अस भुवि)** इस धातु से 'सत्' शब्द सिद्ध होता है। **'यदस्ति त्रिषु कालेषु न बाधते तत्सद् ब्रह्म'** जो सदा वर्त्तमान अर्थात् भूत, भविष्यत्, वर्त्तमान कालों में जिसका बाध न हो, उस परमेश्वर को **'सत्'** कहते हैं।

६०, ६१. **(चिती संज्ञाने)** इस धातु से 'चित्' शब्द सिद्ध होता है। **'यश्चेतति चेतयति संज्ञापयति सर्वान् सज्जनान् योगिनस्तच्चित्परं ब्रह्म'** जो चेतनस्वरूप सब जीवों को चिताने और सत्याऽसत्य का जनानेहारा है, इसलिए उस परमात्मा का नाम **'चित्'** है। इन तीनों शब्दों के विशेषण होने से परमेश्वर को **'सच्चिदानन्दस्वरूप'** कहते हैं।

६२. **'यो नित्यध्रुवोऽचलोऽविनाशी स नित्यः।'** जो निश्चल अविनाशी है, सो **'नित्य'** शब्दवाच्य ईश्वर है।

६३. **(शुन्ध शुद्धौ)** इस से 'शुद्ध' शब्द सिद्ध होता है। **'यः शुन्धति सर्वान् शोधयति वा स शुद्ध ईश्वरः'** जो स्वयं पवित्र सब अशुद्धियों से पृथक् और सब को शुद्ध करने वाला है, इससे ईश्वर का नाम **'शुद्ध'** है।

६४. **(बुध अवगमने)** इस धातु से 'क्त' प्रत्यय होने से 'बुद्ध' शब्द सिद्ध होता है। **'यो बुद्धवान् सदैव ज्ञाताऽस्ति स बुद्धो जगदीश्वरः'** जो सदा सब को जाननेहारा है इससे ईश्वर का नाम **'बुद्ध'** है।

६५. **(मुच्लृ मोचने)** इस धातु से 'मुक्त' शब्द सिद्ध होता है। **'यो मुञ्चति मोचयति वा मुमुक्षून् स मुक्तो जगदीश्वरः'** जो सर्वदा अशुद्धियों से अलग और सब मुमुक्षुओं को क्लेश से छुड़ा देता है, इसलिए परमात्मा का नाम **'मुक्त'** है।

६६. **'अत एव नित्यशुद्धबुद्धमुक्तस्वभावो जगदीश्वरः'** इसी कारण से परमेश्वर का स्वभाव **नित्यशुद्धबुद्धमुक्त** है।

६७. निर् और आङ्पूर्वक **(डुकृञ् करणे)** इस धातु से 'निराकार' शब्द सिद्ध होता है। **'निर्गत आकारात्स निराकारः'** जिस का आकार कोई भी नहीं और न कभी शरीर-धारण करता है, इसलिए परमेश्वर का नाम **'निराकार'** है।

६८. **(अञ्जू व्यक्तिम्लक्षणकान्तिगतिषु)** इस धातु से 'अञ्जन' शब्द और 'निर्' उपसर्ग के योग से 'निरञ्जन' शब्द सिद्ध होता है। **'अञ्जनं व्यक्तिर्म्लक्षणं कुकाम इन्द्रियैः प्राप्तिश्चेत्यस्माद्यो निर्गतः पृथग्भूतः स निरञ्जनः'** जो व्यक्ति अर्थात् आकृति, म्लेच्छाचार, दुष्टकामना और चक्षुरादि इन्द्रियों के विषयों के पथ से पृथक् है, इससे ईश्वर का नाम **'निरञ्जन'** है।

६९, ७०. **(गण संख्याने)** इस धातु से 'गण' शब्द सिद्ध होता है, इसके आगे 'ईश' वा 'पति' शब्द रखने से 'गणेश' और 'गणपति शब्द' सिद्ध होते हैं। **'ये प्रकृत्यादयो जडा जीवाश्च गण्यन्ते संख्यायन्ते तेषामीशः स्वामी पतिः पालको वा'** जो प्रकृत्यादि जड़ और सब जीव प्रख्यात पदार्थों का स्वामी वा पालन करनेहारा है, इससे उस ईश्वर का नाम **'गणेश'** वा **'गणपति'** है।

७१. **'यो विश्वमीष्टे स विश्वेश्वरः'** जो संसार का अधिष्ठाता है, इससे उस परमेश्वर का नाम **'विश्वेश्वर'** है।

७२. **'यः कूटेऽनेकविधव्यवहारे स्वस्वरूपेणैव तिष्ठति स कूटस्थः परमेश्वरः'** जो सब व्यवहारों में व्याप्त और सब व्यवहारों का आधार होके भी किसी व्यवहार

में अपने स्वरूप को नहीं बदलता, इससे परमेश्वर का नाम **'कूटस्थ'** है।

७३, ७४. जितने 'देव' शब्द के अर्थ लिखे हैं उतने ही 'देवी' शब्द के भी हैं। परमेश्वर के तीनों लिङ्गों में नाम हैं। जैसे—**'ब्रह्म चितिरीश्वरश्चेति'**। जब ईश्वर का विशेषण होगा तब 'देव' जब **चिति** का होगा तब 'देवी', इससे ईश्वर का नाम **'देवी'** है।

७५. **(शक्लृ शक्तौ)** इस धातु से 'शक्ति' शब्द बनता है। 'यः सर्वं जगत् कर्तुं शक्नोति स शक्तिः' जो सब जगत् के बनाने में समर्थ है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'शक्ति'** है।

७६. **(श्रिञ् सेवायाम्)** इस धातु से 'श्री' शब्द सिद्ध होता है। **'यः श्रीयते सेव्यते सर्वेण जगता विद्वद्भिर्योगिभिश्च स श्रीरीश्वरः'।** जिस का सेवन सब जगत्, विद्वान् और योगीजन करते हैं, उस परमात्मा का नाम **'श्री'** है।

७७. **(लक्ष दर्शनाङ्कनयोः)** इस धातु से 'लक्ष्मी' शब्द सिद्ध होता है। **'यो लक्षयति पश्यत्यङ्कते चिह्नयति चराचरं जगदथवा वेदैराप्तैर्योगिभिश्च यो लक्ष्यते स लक्ष्मीः सर्वप्रियेश्वरः'** जो सब चराचर जगत् को देखता, चिह्नित अर्थात् दृश्य बनाता, जैसे शरीर के नेत्र, नासिकादि और वृक्ष के पत्र, पुष्प, फल, मूल, पृथिवी, जल के कृष्ण, रक्त, श्वेत, मृत्तिका, पाषाण, चन्द्र, सूर्यादि चिह्न बनाता तथा सब को देखता, सब शोभाओं की शोभा और जो वेदादिशास्त्र वा धार्मिक विद्वान् योगियों का लक्ष्य अर्थात् देखने योग्य है, इससे उस परमेश्वर का नाम **'लक्ष्मी'** है।

७८. **(सृ गतौ)** इस धातु से 'सरस्' उस से मतुप् और ङीप् प्रत्यय होने से 'सरस्वती' शब्द सिद्ध होता है। **'सरो विविधं ज्ञानं विद्यते यस्यां चितौ सा सरस्वती'** जिस को विविध विज्ञान अर्थात् शब्द, अर्थ, सम्बन्ध प्रयोग का ज्ञान यथावत् होवे, इससे उस परमेश्वर का नाम **'सरस्वती'** है।

७९. **'सर्वाः शक्तयो विद्यन्ते यस्मिन् स सर्वशक्तिमानीश्वरः'** जो अपने कार्य करने में किसी अन्य की सहायता की इच्छा नहीं करता, अपने ही सामर्थ्य से अपने सब काम पूरा करता है, इसलिए उस परमात्मा का नाम **'सर्वशक्तिमान्'** है।

८०. **(णीञ् प्रापणे)** इस धातु से 'न्याय' शब्द सिद्ध होता है। **'प्रमाणैरर्थपरीक्षणं न्यायः।'** यह वचन न्यायसूत्रों के ऊपर वात्स्यायनमुनिकृत भाष्य का है। **'पक्षपातराहित्याचरणं न्यायः'** जो प्रत्यक्षादि प्रमाणों की परीक्षा से सत्य-सत्य सिद्ध हो तथा पक्षपातरहित धर्मरूप आचरण है वह न्याय कहाता है। **'न्यायं कर्तुं शीलमस्य स न्यायकारीश्वरः'** जिस का न्याय अर्थात् पक्षपातरहित धर्म करने ही का स्वभाव है, इससे उस ईश्वर का नाम **'न्यायकारी'** है।

८१. **(दय दानगतिरक्षणहिंसादानेषु)** इस धातु से 'दया' शब्द सिद्ध होता है। **'दयते ददाति जानाति गच्छति रक्षति हिनस्ति यया सा दया, बह्वी दया विद्यते यस्य स दयालुः परमेश्वरः'** जो अभय का दाता, सत्याऽसत्य सर्व विद्याओं का जानने, सब सज्जनों की रक्षा करने और दुष्टों को यथायोग्य दण्ड देनेवाला है, इस से परमात्मा का नाम **'दयालु'** है।

८२. **'द्वयोर्भावो द्वाभ्यामितं सा द्विता द्वीतं वा सैव तदेव वा द्वैतम्, न विद्यते द्वैतं द्वितीयेश्वरभावो यस्मिंस्तदद्वैतम्।** अर्थात् **'सजातीयविजातीयस्वगतभेदशून्यं ब्रह्म'** दो का होना वा दोनों से युक्त होना वह द्विता वा द्वीत अथवा द्वैत से रहित है। सजातीय जैसे मनुष्य का सजातीय दूसरा मनुष्य होता है, विजातीय जैसे मनुष्य

से भिन्न जातिवाला वृक्ष, पाषाणादि। स्वगत अर्थात् जैसे शरीर में आँख, नाक, कान आदि अवयवों का भेद है, वैसे दूसरे स्वजातीय ईश्वर, विजातीय ईश्वर वा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक परमेश्वर है, इस से परमात्मा का नाम **'अद्वैत'** है।

८३. **'गण्यन्ते ये ते गुणा यैर्गणयन्ति ते गुणाः, यो गुणेभ्यो निर्गतः स निर्गुण ईश्वरः'** जितने सत्त्व, रज, तम, रूप, रस, स्पर्श, गन्धादि जड़ के गुण, अविद्या, अल्पज्ञता, राग, द्वेष और अविद्यादि क्लेश जीव के गुण हैं उन से जो पृथक् है। इन में **'अशब्दमस्पर्शमरूपमव्ययम्'** इत्यादि उपनिषदों का प्रमाण है। जो शब्द, स्पर्श, रूपादि गुणरहित है, इससे परमात्मा का नाम **'निर्गुण'** है।

८४. **'यो गुणैः सह वर्त्तते स सगुणः'** जो सब का ज्ञान, सर्वसुख, पवित्रता, अनन्त बलादि गुणों से युक्त है, इसलिए परमेश्वर का नाम **'सगुण'** है। जैसे पृथिवी गन्धादि गुणों से 'सगुण' और इच्छादि गुणों से रहित होने से 'निर्गुण' है, वैसे जगत् और जीव के गुणों से पृथक् होने से परमेश्वर 'निर्गुण' और सर्वज्ञादि गुणों से सहित होने से 'सगुण' है। अर्थात् ऐसा कोई भी पदार्थ नहीं है जो सगुणता और निर्गुणता से पृथक् हो। जैसे चेतन के गुणों से पृथक् होने से जड़ पदार्थ निर्गुण और अपने गुणों से सहित होने सगुण, वैसे ही जड़ के गुणों से पृथक् होने से जीव निर्गुण और इच्छादि अपने गुणों से सहित होने से सगुण। ऐसे ही परमेश्वर में भी समझना चाहिए।

८५. **'अन्तर्यन्तुं नियन्तुं शीलं यस्य सोऽयमन्तर्यामी'** जो सब प्राणी और अप्राणिरूप जगत् के भीतर व्यापक होके सब का नियम करता है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'अन्तर्यामी'** है।

८६. **'यो धर्म्मे राजते स धर्मराजः'** जो धर्म ही में प्रकाशमान और अधर्म से रहित, धर्म ही का प्रकाश करता है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'धर्म्मराज'** है।

८७. **(यमु उपरमे)** इस धातु से 'यम' शब्द सिद्ध होता है। **'य सर्वान् प्राणिनो नियच्छति स यमः'** जो सब प्राणियों के कर्मफल देने की व्यवस्था करता और सब अन्यायों से पृथक् रहता है, इसलिए परमात्मा का नाम **'यम'** है।

८८. **(भज सेवायाम्)** इस धातु से 'भग' इससे मतुप् होने से 'भगवान्' शब्द सिद्ध होता है। **'भगः सकलैश्वर्य्यं सेवनं वा विद्यते यस्य स भगवान्'** जो समग्र ऐश्वर्य से युक्त वा भजने के योग्य है, इसीलिए उस ईश्वर का नाम **'भगवान्'** है।

८९. **(मन ज्ञाने)** इस धातु से 'मनु' शब्द बनता है। **'यो मन्यते स मनुः'** जो मनु अर्थात् विज्ञानशील और मानने योग्य है, इसलिये उस ईश्वर का नाम **'मनु'** है।

९०. **(पॄ पालनपूरणयोः)** इस धातु से 'पुरुष' शब्द सिद्ध हुआ है **'यः स्वव्याप्त्या चराऽचरं जगत् पृणाति पूरयति वा स पुरुषः'** जो सब जगत् में पूर्ण हो रहा है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'पुरुष'** है।

९१. **(डुभृञ् धारणपोषणयोः)** 'विश्व' पूर्वक इस धातु से 'विश्वम्भर' शब्द सिद्ध होता है। **'यो विश्वं बिभर्ति धरति पुष्णाति वा स विश्वम्भरो जगदीश्वरः'** जो जगत् का धारण और पोषण करता है, इसलिये उस परमेश्वर का नाम **'विश्वम्भर'** है।

९२. **(कल संख्याने)** इस धातु से 'काल' शब्द बना है। **'कलयति संख्याति सर्वान् पदार्थान् स कालः'** जो जगत् के सब पदार्थ और जीवों की संख्या करता

है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'काल'** है।

९३. (शिष्लृ विशेषणे) इस धातु से 'शेष' शब्द सिद्ध होता है। **'यः शिष्यते स शेषः'** जो उत्पत्ति और प्रलय से शेष अर्थात् बच रहा है, इसलिए उस परमात्मा का नाम **'शेष'** है।

९४. (आप्लृ व्याप्तौ) इस धातु से 'आप्त' शब्द सिद्ध होता है। **'यः सर्वान् धर्मात्मन आप्नोति वा सर्वैर्धर्मात्मभिराप्यते छलादिरहितः स आप्तः'** जो सत्योप-देशक, सकल विद्यायुक्त, सब धर्मात्माओं को प्राप्त होता है और धर्मात्माओं से प्राप्त होने योग्य छल-कपटादि से रहित है, इसलिये उस परमात्मा का नाम **'आप्त'** है।

९५. (डुकृञ् करणे) 'शम्' पूर्वक इस धातु से 'शङ्कर' शब्द सिद्ध हुआ है। **'यः शङ्कल्याणं सुखं करोति स शङ्करः'** जो कल्याण अर्थात् सुख का करनेहारा है, इससे उस ईश्वर का नाम **'शङ्कर'** है।

९६. 'महत्' शब्द पूर्वक 'देव' शब्द से 'महादेव' सिद्ध होता है। **'यो महतां देवः स महादेवः'** जो महान् देवों का देव अर्थात् विद्वानों का भी विद्वान्, सूर्यादि पदार्थों का प्रकाशक है, इसलिए उस परमात्मा का नाम **'महादेव'** है।

९७. (प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च) इस धातु से 'प्रिय' शब्द सिद्ध होता है। **'यः पृणाति प्रीयते वा स प्रियः'** जो सब धर्मात्माओं, मुमुक्षुओं और शिष्टों को प्रसन्न करता और सब को कामना के योग्य है, इसलिए उस ईश्वर का नाम **'प्रिय'** है।

९८. (भू सत्तायाम्) 'स्वयं' पूर्वक इस धातु से 'स्वयम्भू' शब्द सिद्ध होता है। **'यः स्वयं भवति स स्वयम्भूरीश्वरः'** जो आप से आप ही है, किसी से कभी उत्पन्न नहीं हुआ, इस से उस परमात्मा का नाम **'स्वयम्भू'** है।

९९. (कु शब्दे) इस धातु से 'कवि' शब्द सिद्ध होता है। **'यः कौति शब्दयति सर्वा विद्याः स कविरीश्वरः'** जो वेद द्वारा सब विद्याओं का उपदेष्टा और वेत्ता है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'कवि'** है।

१००. (शिवु कल्याणे) इस धातु से 'शिव' शब्द सिद्ध होता है। **'बहुलमेतन्निदर्शनम्।'** इससे शिवु धातु माना जाता है, जो कल्याणस्वरूप और कल्याण का करनेहारा है, इसलिए उस परमेश्वर का नाम **'शिव'** है।

ये सौ नाम परमेश्वर के लिखे हैं। परन्तु इन से भिन्न परमात्मा के असंख्य नाम हैं। क्योंकि जैसे परमेश्वर के अनन्त गुण, कर्म, स्वभाव हैं, वैसे उस के अनन्त नाम भी हैं। उनमें से प्रत्येक गुण, कर्म्म और स्वभाव का एक-एक नाम है। इस से ये मेरे लिखे नाम समुद्र के सामने विन्दुवत् हैं। क्योंकि वेदादि शास्त्रों में परमात्मा के असंख्य गुण, कर्म, स्वभाव व्याख्यात किये हैं। उनके पढ़ने पढ़ाने से बोध हो सकता है। और अन्य पदार्थों का ज्ञान भी उन्हीं को पूरा-पूरा हो सकता है, जो वेदादिशास्त्रों को पढ़ते हैं।

(प्रश्न) जैसे अन्य ग्रन्थकार लोग आदि, मध्य और अन्त में मङ्गलाचरण करते हैं वैसे आपने कुछ भी न लिखा, न किया?

(उत्तर) ऐसा हम को करना योग्य नहीं। क्योंकि जो आदि, मध्य और अन्त में मङ्गल करेगा तो उसके ग्रन्थ में आदि मध्य तथा अन्त के बीच में जो कुछ लेख होगा वह अमङ्गल ही रहेगा। इसलिए **'मङ्गलाचरणं शिष्टाचारात् फलदर्शनाच्छ्रुतितश्चेति ।'** यह सांख्यशास्त्र का वचन है। इस का यह अभिप्राय है कि जो न्याय, पक्षपातरहित, सत्य, वेदोक्त ईश्वर की आज्ञा है, उसी का यथावत्

सर्वत्र और सदा आचरण करना मङ्गलाचरण कहाता है। ग्रन्थ के आरम्भ से ले के समाप्तिपर्यन्त सत्याचार का करना ही मङ्गलाचरण है, न कि कहीं मङ्गल और कहीं अमङ्गल लिखना। देखिए, महाशय महर्षियों के लेख को—

यान्यनवद्यानि कर्माणि तानि सेवितव्यानि नो इतराणि॥

—यह तैत्तिरीयोपनिषत् का वचन है।

हे सन्तानो! जो 'अनवद्य' अनिन्दनीय अर्थात् धर्मयुक्त कर्म हैं वे ही तुम को करने योग्य हैं, अधर्मयुक्त नहीं।

इसलिए जो आधुनिक ग्रन्थों में **'श्रीगणेशाय नमः', 'सीतारामाभ्यां नमः', 'राधाकृष्णाभ्यां नमः', 'श्रीगुरुचरणारविन्दाभ्यां नमः', 'हनुमते नमः', 'दुर्गायै नमः', 'वटुकाय नमः', 'भैरवाय नमः', 'शिवाय नमः', 'सरस्वत्यै नमः', 'नारायणाय नमः'** इत्यादि लेख देखने में आते हैं, इन को बुद्धिमान् लोग वेद और शास्त्रों से विरुद्ध होने से मिथ्या ही समझते हैं। क्योंकि वेद और ऋषियों के ग्रन्थों में कहीं ऐसा मङ्गलाचरण देखने में नहीं आता और आर्ष ग्रन्थों में **'ओ३म्'** तथा **'अथ'** शब्द तो देखने में आता है। देखो—

'अथ शब्दानुशासनम्' अथेत्ययं शब्दोऽधिकारार्थः प्रयुज्यते।

—यह व्याकरणमहाभाष्य।

'अथातो धर्मजिज्ञासा' अथेत्यानन्तर्ये वेदाध्ययनानन्तरम्। —यह पूर्वमीमांसा।

'अथातो धर्मं व्याख्यास्यामः'। अथेति धर्मकथनानन्तरं धर्मलक्षणं विशेषेण व्याख्यास्यामः। —यह वैशेषिकदर्शन।

'अथ योगानुशासनम्'। अथेत्ययमधिकारार्थः। —यह योगशास्त्र।

'अथ त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्तिरत्यन्तपुरुषार्थः।' सांसारिकविषयभोगानन्तरं त्रिविधदुःखात्यन्तनिवृत्त्यर्थः प्रयत्नः कर्त्तव्यः'। —यह सांख्यशास्त्र।

'अथातो ब्रह्मजिज्ञासा'। —यह वेदान्तसूत्र है।

'ओमित्येतदक्षरमुद्गीथमुपासीत'। —यह छान्दोग्य उपनिषत् का वचन है।

'ओमित्येतदक्षरमिदꣳ सर्वं तस्योपव्याख्यानम्'।

—यह माण्डूक्य उपनिषत् के आरम्भ का वचन है।

ऐसे ही अन्य ऋषि मुनियों के ग्रन्थों में 'ओम्' और 'अथ' शब्द लिखे हैं, वैसे ही **(अग्नि, इट्, अग्नि, ये त्रिषप्ताः परियन्ति)** ये शब्द चारों वेदों के आदि में लिखे हैं। **'श्रीगणेशाय नमः'** इत्यादि शब्द कहीं नहीं। और जो वैदिक लोग वेद के आरम्भ में **'हरिः ओम्'** लिखते और पढ़ते हैं, यह पौराणिक और तान्त्रिक लोगों की मिथ्या कल्पना से सीखे हैं। वेदादिशास्त्रों में 'हरि' शब्द आदि में कहीं नहीं। इसलिए **'ओ३म्'** वा **'अथ'** शब्द ही ग्रन्थ के आदि में लिखना चाहिए।

यह किञ्चित्मात्र ईश्वर के विषय में लिखा, अब इस के आगे शिक्षा के विषय में लिखा जायगा।

इति श्रीमद्दयानन्दसरस्वतीस्वामिकृते सत्यार्थप्रकाशे
सुभाषाविभूषित ईश्वरनामविषये
प्रथमः समुल्लासः सम्पूर्णः॥ १॥